आजाद भारत में नयी तालीम का प्रयोग

ऋषभ कुमार मिश्र

1950-60 के दशक में आजाद भारत में भविष्य की नींव रखी जा रही थी। पूरे देश में उत्साह था। यह बोध था कि हम 'अपनी' व्यवस्थाओं का 'अपने लोगों' के लिए विकास कर रहे हैं। इस दौर में शिक्षा संबंधी अनेक प्रयोग हो रहे थे। इन प्रयोगों में बुनियादी शिक्षा को लेकर एक आकर्षण था। गांधी से प्रभावित कार्यकर्ता अपने-अपने क्षेत्रों में बुनियादी शिक्षा के सिद्धान्तों के अनुसार स्कूल खोल रहे थे। ऐसे माहौल में वर्ष 1950 में चितरंजन दास ने उड़ीसा के अंगुल जिले के पास, चंपातीमुंडा, में एक उत्तर-बुनियादी विद्यालय आरंभ किया। वे स्वयं राष्ट्रीय आंदोलन के बड़े नेता थे। आजादी के बाद इन्होंने शिक्षा के द्वारा सामाजिक बदलाव का सपना देखा। गांधी की तरह वे ग्राम समाज में विश्वास करते थे। इन्होंने सहकार और पारस्परिकता पर आधारित एक स्वावलंबी ग्राम समाज को विकसित करने का स्वप्न देखा। इसे साकार करने के लिए जिन युवाओं की आवश्यकता थी उसकी तैयारी के लिए उन्होंने उक्त उत्तर-बुनियादी विद्यालय की स्थापना की। यह स्कूल चार वर्षों तक चला और फिर बंद हो गया। अपने अनुभवों को चितरंजन दास ने 'लेटर्स फ्रॉम अ फॉरेस्ट स्कूल' में प्रस्तुत किया है। इस पुस्तक को आधार बनाकर प्रस्तुत लेख विश्लेषित करने का प्रयास करता है कि इस उत्तर-बुनियादी विद्यालय की विषेशताएं क्या थीं? यह प्रयोग क्यों असफल रहा?

सीखने वालों का परिवार

इस विद्यालय को उन्होंने शहर के भागम-भाग भरी जिंदगी से दूर गांव के निकट एक जंगल में स्थापित किया। स्कूल के लिए ऐसे स्थान विशेष के चुनाव के बारे में इनकी टिप्पणी थी कि ''स्कूल गांव के निकट होगा लेकिन गांव में नहीं। वहां साधन होगें लेकिन वह सभ्यता के बोझ तले नहीं दबा होगा। वहां उपभोक्तावाद का कोई लक्षण नहीं होगा[1]। विद्यार्थी को किसी तयशुदा मॉडल में ढालने की रंच मात्र भी कोशिश नहीं होगी[2]।'' इन दोनों कथनों से चितरंजनदास की शिक्षा दृष्टि स्पष्ट होती है। वे अपने विद्यालय को कारखाना नहीं बनाना चाहते हैं जहां उपभोक्ता जो चाहता है, उसका उत्पादन हो। वे नयी तालीम के सिद्धान्तानुसार प्रकृति, उद्योग और समुदाय के पारस्परिक संबंध को विद्यालय का आधार बनाना चाहते थे। इनके माध्यम से वे ऐसे विद्यार्थी तैयार करना चाहते थे जो सर्वोदय और ग्राम स्वराज के लक्ष्य को साकार कर सके। वे सरकार की जरूरत के हिसाब से पढ़े-लिखे लोगों की पूर्ति के लिए विद्यालय को माध्यम बनाने के सख़्त खिलाफ थे।

चंपातीमुंडा के पास जंगल में स्कूल को आरंभ करना और उसे चलाना कोई आसान काम नहीं था। खुले मैदान में पढ़ाई के दौरान बारिश हो जाना, रात को चीते का आना, लकड़ियों की समस्या, सोने के स्थान की समस्या आदि के साथ यह स्कूल शुरू होता है। पूरे उत्साह के साथ विद्यालय आरंभ हुआ। इस भाव को व्यक्त करते हुए चितरंजनदास लिखते हैं- ''उसने जिसने अपने मस्तिष्क, बुद्धि और हृदय को तैयार किया है कि वह रोज के अनुभवों से सीखेगा, वह अपनी सीखने की क्षमताओं का अनंत विस्तार करेगा।''[3] इस ऊर्जा के साथ जंगल

का विद्यालय सजीव हो उठता है। इस विद्यालय के स्थापना वर्ष में उन्हीं विद्यार्थियों को प्रवेश दिया गया जिन्होंने 8 वर्ष की बुनियादी शिक्षा पूर्ण कर ली थी। प्रथम वर्ष में 26 विद्यार्थियों ने प्रवेश लिया। इस विद्यालय के संचालन के लिए उड़ीसा सरकार द्वारा 200 एकड़ की भूमि दी गई थी। स्कूल का आरंभ तीन छोटे कमरों और टेंट के साथ हुआ। स्कूल के शिक्षक और विद्यार्थी सुबह ईटें बिछातें और जंगल से लकड़ियां लाते। दोपहर में महुए के वृक्षों के नीचे कक्षाएं चलती थीं। इस तरह के साथ प्रकृति के बीच 'सीखने वालों का परिवार' बसने लगा। छोटी-छोटी पहाड़ियों पर शिक्षक बैठकर बच्चों के साथ बातें करते। वे इतिहास, भूगोल, विज्ञान और साहित्य के साथ अपने रोजमर्रा की चुनौतियों को मिलकर सुलझाते। शिक्षक संख्या में कम थे। उनकी कमी को पुस्तकालय की सामग्रियों से पूरा करने की कोशिश की जाती थी। इस तरह से एक प्राकृतिक परिवेश में प्रेम और स्नेह से स्कूल की संस्था खड़ी होने लगी। इस संस्था की विशिष्टता के बारे में चितरंतन दास लिखते हैं- ''प्रकृति से सौंदर्य और रिश्तों में प्रगाढ़ता स्कूल की बुनियाद है''।[4] यह बुनियाद गुणवत्ता वाली शिक्षा का आधार बनती है जहां केवल सबको शिक्षा ही नहीं मिलती बल्कि यह समानतामूलक, सृजनक्षमता को संवर्धित करने वाली और प्रकृति के साथ सहअस्तित्व के भाव को पोषित करती है। इस विद्यालय में अहिंसा आधारित शांतिमूलक जीवन का अभ्यास किया जाता है। सीखने की गतिविधि कृत्रिम न होकर जीवन के लय के साथ चलती है। विद्यालय के इस परिवेश को जीवन के साथ सीखने का स्रोत माना जा सकता है।

विचारों का स्वराज

चितरंजन दास का मानना था कि जहां विचारों को स्वीकार करने की स्वतंत्रता होती है वहां स्वाभाविक आनंद पैदा होता है। विचारों की स्वतंत्रता व्यक्ति अपने पूर्वग्रहों से मुक्त करती है। सामाजिक बदलाव के लिए तैयार करती है। दूसरे विचारों से संवाद और उनकी स्वीकार्यता की पृष्ठभूमि तैयार करती है। इसके लिए वे विद्यालय में क्रिसमस मनाए जाने का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। इस उत्सव के अनुभव को दर्ज करते हुए एक विद्यार्थी के उद्धरण का उल्लेख करते हैं जो कहता है- ''सभी धर्म समान हैं। यदि हम दूसरे धर्म के बारे में नहीं जानते हैं उनके उपदेशकों/विचारकों के विचार को नहीं सुनते हैं तो क्या हमारा खुद का धार्मिक जीवन पूर्ण होगा?'' यह कथन प्रमाण है कि कैसे विद्यालय की संस्कृति ने विद्यार्थी की मननशीलता को पोषित किया। यह सवाल किताब और परीक्षा से नहीं पैदा हुआ बल्कि उन अन्तःक्रियाओं और संवाद से उपजा जिसका विद्यालय में अवसर था। इसी तरह वे पुरी में सर्वोदय सम्मेलन के आयोजन में विद्यार्थियों और शिक्षकों की सहभागिता का उल्लेख करते हैं। इस सम्मेलन में विद्यार्थी और शिक्षक जीवन और समाज के प्रत्यक्ष अनुभवों के माध्यम से सीखते हैं। वस्तुतः वे स्वयं सेवक की भूमिका में राजीनीतिक-सामाजिक समझ का विकास करते हैं। इस तरह की गतिविधियों में उनकी भागीदारी उनकी स्वतंत्रता के साथ खोजी प्रवृत्ति का बनाती है। चितरंजन दास चाहते तो वे विद्यार्थियों को सर्वोदय का मूल्य अपनाने का 'उपदेश' दे सकते थे लेकिन उन्होंने विद्यार्थियों को खुद से इसकी पड़ताल करने का अवसर दिया। उन्हें इसके पक्ष और विपक्ष से जुड़ी चर्चा में शामिल किया। विचारों का यह स्वराज इस स्कूल के विद्यार्थियों के दायित्व बोध को संवर्धित करता था। वे केवल समाज में जाकर कोई दिया कार्य नहीं करते थे बल्कि उसके औचित्य और भूमिका के प्रति सचेत रहते थे।

समुदाय के साथ संबंध

इस स्कूल का समुदाय के साथ विशेष संबंध विकसित होता है। चितरंजन दास अपना अनुभव साझा करते हुए बताते हैं कि विद्यार्थियों ने विद्यालय के वार्षिकोत्सव में अभिभावकों को आमंत्रित किया। कुल 25 अभिभावकों को निमंत्रण भेजा गया, जिनमें से छह आए। विद्यार्थियों ने पूरे कार्यक्रम के आयोजन का दायित्व संभाला। सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। चितरंजनदास इस आयोजन की विशिष्टता बताते हैं कि दूसरे स्कूलों में अभिभावकों के सामने बच्चे पहाड़ा सुनाते या भाषा के कौशलों का प्रदर्शन करते हैं। जबकि इस स्कूल में बच्चों ने जो सीखा था उसे जीवन व्यवहार में उतार कर दिखाया। अभिभावकों ने जाना कि स्कूल ने उनके बच्चों के जीवन को कैसे प्रभावित

किया है। समुदाय के साथ इस तरह का संबंध उन्हें आश्वस्त करता है कि एक 'विचित्र' स्कूल कैसे कार्य करता है? इस विश्वास को विद्यालय परिवार ने पुनः पुष्ट किया। उसी वर्ष गांव में बाढ़ आ गई। इस दौरान स्कूल के विद्यार्थियों और शिक्षकों ने मिलकर समुदाय की मदद की। इस अवसर पर उनका सेवाभाव प्रशंसनीय था। इसकी सराहना की गई।

अनूठी परीक्षा

इस पुस्तक में चितरंजनदास विद्यालय की अकादमिक गतिविधियों का भी अनूठापन बताते हैं। इस स्कूल की परीक्षा विधि विशिष्ट थी। इसमें केवल विषयों की दो घंटे या तीन घंटे की लिखित परीक्षा नहीं ली जाती थी बल्कि जिन गतिविधियों में भागीदारी की है उस पर मननपूर्ण सवाल रखे गए थे। इसका उदाहरण नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है[5]-

- आपको कौनसी प्रार्थना पसंद है और क्यों?
- पिछले वर्ष आप कितनी बार बीमार हुए? आपके अनुसार कितनी बार आप अपनी लापरवाही से बीमार हुए हैं?
- काम और पढ़ाई अथवा काम के द्वारा पढ़ाई आप किसके पक्ष में हैं और क्यों?
- आप राष्ट्रीय साहित्य से क्या समझते हैं?
- पिछले वर्ष पाकिस्तान में लोकतांत्रिक सरकार की स्थापना हुई है। आपके अनुसार पाकिस्तान के लोकतंत्र और भारत के लोकतंत्र में क्या अंतर है?
- रूस और अमेरिका विश्व को दो हिस्सों में बांटने की कोशिश कर रहे हैं। वे किन तरह के तरीकों का प्रयोग कर रहे हैं?

इस स्कूल की परीक्षा के साथ-साथ विद्यार्थियों को उनकी उपलब्धि और सीमाओं के बारे में बताने का भी एक अनोखा तरीका था। हर तीन महीने पर अध्यापक बच्चों को पत्र लिखते थे। उस पत्र में एक तरह से विद्यार्थी का आकलन रहता था। वह पत्र को बच्चे को व्यक्तिगत रूप से दिया जाता था। जिसमें बच्चे की उपलब्धियों के साथ-साथ सीमाओं का उल्लेख रहता था। इसका एक नमूना नीचे दी गयी तालिका में प्रस्तुत किया गया है[6]-

- आपके प्रयास सही दिशा में है। आप अपने जीवन में अनुशासन के लिए भी प्रतिबद्ध है लेकिन आप हिंदी में कमजोर है और बंगाली पर भी ध्यान नहीं दे रहे हैं। आपने पुस्तकालय से जो किताबें ली हैं उसका भी पूरा रिकॉर्ड नहीं रखते हैं।
- आप अपने कार्यों को नियमित करने में सफल रहे हैं। आप और एकाग्रता से पढ़ सकते हैं। इसके लिए आपके पास क्षमता है। इसे साकार करना होगा।
- तुम्हारे पास संगीत के क्षेत्र में आगे बढ़ने की क्षमता है तुम इसका उपयोग क्यों नहीं करते हो? तुम्हारा शरीर ताकतवर है। तुम खेल में इसका उपयोग क्यों नहीं करते हो?

इस आख्यान को पढ़ने वाले पाठकों के मन में सवाल उठ रहा होगा कि यहां पढ़ने वाले विद्यार्थियों की सोचने-विचारने की क्षमता पर इन अनुभवों का क्या प्रभाव पड़ा होगा? इस प्रभाव को व्याख्यायित करने के लिए चितरंजनदास विद्यार्थियों के विभिन्न अध्ययन समूहों द्वारा लिखी गयी टिप्पणियों का उल्लेख करते हैं-

- शिक्षा में स्वतंत्रता का आशय स्कूल को सृजन के स्थान के रूप में विकसित करना है। स्वतंत्रता का आशय बड़ों की दुनिया और उनकी अपेक्षाओं से बचाना है। हर भागीदार को अपना रास्ता चुनने और उस पर आगे बढ़ने का सामर्थ्य देना है।

- स्वावलंबन का अर्थ उत्पादन बढ़ाना और उसे बेचना नहीं है। न ही इसके लिए विद्यार्थियों को बाध्य किया जाना चाहिए। स्वावलंबन और ज्ञान की जिज्ञासा के बीच संतुलन होना चाहिए।
- शिक्षा सहकार युक्त जीवन जिसमें व्यक्तियों को दायित्व बोध हो उनमें लालच और प्रतियोगिता के स्थान पर सबके कल्याण और लोकतांत्रिक व्यवस्था के प्रति निष्ठा हो।
- बुनियादी शिक्षा की पद्धति केवल गांव या गरीब के बच्चों के लिए नहीं है। यह एक वैज्ञानिक पद्धति है जिसमें समग्र मनुष्य के विकास का लक्ष्य होता है। वह किताब के स्थान पर सीधे दुनियावी अनुभवों से सीखता है।

विद्यार्थियों की टिप्पणियां स्पष्ट करती हैं कि वे खुद को, परिवेश को और परिवेश को जानने में शिक्षा की भूमिका को विशिष्ट मानते हैं। वे केवल उपलब्धियों या सफलता के पीछे नहीं है। वे खुद को एक बेहतर जीवन के लिए तैयार कर रहे हैं। वे शिक्षा और विकास की प्रक्रियाओं की सीमाओं को रेखांकित कर रहे हैं। उनके लिए 'नौकरी' की चिंता के स्थान पर स्वालंबन प्राथमिक है। उनके लिए परिस्थितियों से समायोजन के स्थान पर बदलाव करना महत्वपूर्ण है। उनके मन-मस्तिष्क में एक भिन्न सभ्यता दृष्टि है जिस ओर वे बढ़ने को उद्यत हैं।

प्रयोग का अवसान

लगभग 4 वर्षों तक विद्यालय का संचालन करने के दौरान चितरंजन दास पाते हैं कि स्वतंत्रता के बाद की नयी परिस्थितियों में शिक्षा द्वारा नौकरी प्राप्त करने की आकांक्षा बलवती हुई। हर व्यक्ति स्वावलंबन, सेवा और सर्वोदय के स्थान पर सत्ता का भागीदार बनना चाह रहा था। समाज में स्कूल को नगरीय जीवन के केन्द्र के रूप में देखा जाने लगा। इन परिस्थितियों में बुनियादी विद्यालयों का आकर्षण कम होने लगा। इसके अलावा राज्य पोषित शिक्षा व्यवस्था जिसमें स्वालंबन, स्वतंत्रता और स्वराज का बीज बनने की संभावना थी वह हर स्कूल के लिए एक समान मानदंड को लागू करने के लिए उतावली होने लगी। विद्यालयों पर नौकर शाही का दबाव बढ़ने लगा। शिक्षा से जुड़े नौकरशाह उत्तर-बुनियादी स्कूल के विद्यर्थियों को बाध्य करते हैं कि वे उच्चतर माध्यमिक कक्षा की परीक्षा पास करने से पहले मैट्रिक की परीक्षा पास कर लें। चितरंजनदास बुनियादी शिक्षा के मॉडल का उल्लेख करते हुए अपने विद्यार्थियों के लिए विशेष व्यवस्था की मांग करते रहे। लेकिन नौकरशाही ने बाध्यकारी पुस्तक-आधारित और परीक्षोन्मुख व्यवस्था को कायम रखा। इन परिस्थितियों में कुछ विद्यार्थी आधी-अधूरी तैयारी के साथ परीक्षा में बैठे। कुछ न दूसरे विद्यालय में प्रवेश लिया। इन परिस्थितियों में विद्यालय लड़खड़ाने लगा और अंततः बंद हो गया। विद्यालय के छोटे से जीवन का आकलन करते हुए चितरंजनदास शिक्षा और समाज के संबंध में यथास्थितिवादिता की व्याख्या करते हैं। वे बताते हैं कि हमारी शिक्षा व्यवस्था ऐसे अस्थिर दिमागों को तैयार कर रही है जो अपनी योजनाओं में उलझे हुए हैं। इनके सपनों में 'हासिल' करने की चाहत है। वे सहकार जीवन और स्वावलंबन के स्थान पर नौकरी पाने की इच्छा रखते हैं। शिक्षक इससे भिन्न नहीं है। कोई भी शिक्षक गांव के विद्यालय में रुकना नहीं चाहता। वह पढ़ाना नहीं चाहता। उसके लिए गांव के लिए किया जाने वाला हर कार्य पिछड़ेपन का परिणाम है। हमारी शिक्षा व्यवस्था वयस्कों की अधिनायकवादी व्यवस्था से मुक्त नहीं हो पायी है। मनुष्य जीवन के अन्य क्षेत्रों की भांति शिक्षा भी मानने लगी है कि 'प्रकृति' हर बाधा की मूल है। शिक्षा व्यवस्था ने स्वीकृति दे दी है कि सीखने के बजाय उपयोगी ज्ञानार्जन कर सुरक्षित जीविका की खोज हमारा लक्ष्य होना चाहिए। अध्यापक इसी लक्ष्य के फलीभूत रूप बनते जा रहे हैं। इसी कारण सेवा-भाव से भरे अपने विषय ज्ञान के प्रति अनुसंधान का भाव रखने वाले जिज्ञासु मस्तिष्क के शिक्षक नहीं मिल रहे हैं। इसका दुष्प्रभाव विद्यालय संस्कृति पर पड़ रहा है। अध्यापक के व्यवहार के बारे में एक विद्यार्थी अपनी डायरी में लिखता है कि ''मेरे शिक्षक मेरे साथ क्यों नहीं रहते''। विद्यार्थी का कथन शिक्षक-शिक्षार्थी के बीच बढ़ती दूरी का प्रमाण है। शिक्षक की भूमिका को कक्षा शिक्षक तक सीमित करने के कारण शिक्षा एकांगी होती जा रही है। शिक्षक की भूमिका राज्य के नौकर के रूप में सफल है लेकिन वह शिक्षार्थी और शिक्षा के लिए कारगर नहीं हो पा रही है। जबकि अध्यापक केवल नौकरी नहीं करते बल्कि वे अपने विद्यार्थियों के साथ मिलकर स्वराज को जीते हैं।

लगातार परिवर्तन की चेतना को जगाते रहते हैं। वे विद्यार्थियों को क्या करना है? इसका निर्देश मात्र नहीं देते बल्कि खुद करने के लिए उद्यत रहते हैं। ऐसे अध्यापक ही शिक्षा के सही अर्थ को साकार कर सकते हैं।

चितरंजनदास द्वारा अपने उत्तर-बुनियादी स्कूल की सफलता और विफलता का जो आख्यान प्रस्तुत किया गया वह स्पष्ट करता है कि आजाद भारत का शिक्षित और नौकरीपेशा वर्ग गांव, गरीबी और निरक्षरता को एक दूसरे के पर्यायवाची के रूप में इस्तेमाल करता है। ऐसी दशा में हम साक्षरता द्वारा गांव के गरीब को ऊपर उठाने वाला ज्ञान देने की बात करते हैं। जबकि बुनियादी शिक्षा और चितरंजन दास का प्रयोग उन्हें स्वतंत्रता और स्वावलंबन के लिए प्रेरित करता है। हमें समझना होगा कि गरीबी के नाम पर ज्ञान को रोजगार का अर्थ देना पर्याप्त नहीं है। हमें शिक्षक और शिक्षार्थियों की 'आत्मा' की आवश्यकता और उनकी सृजन करने की क्षमता की उपेक्षा नहीं कर सकते हैं। इन दोनों आवश्यकताओं की पूर्ति उद्योग, प्रकृति और समुदाय के समवाय से संबंधित है। रोजमर्रा के जीवन में सत्य, अहिंसा और समानता के अभ्यास से है। इसके लिए हमें विकास की संकल्पना को वर्चस्व करने की प्रवृत्ति से अलग करके देखना होगा। इसके बिना शिक्षा अपने लक्ष्य को साकार नहीं कर सकती है। ◆

लेखक परिचय : सहायक प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा।

संपर्क : 7057392903; rishabhrkm@gmail.com

संदर्भ

1. चितरंजन दास 2007; ''लेटर्स फ्रोम अ फॉरेस्ट स्कूल'', नई दिल्लीः नेशनल बुक ट्रस्ट, पृष्ठ-14 और 152
2. वही, पृष्ठ-152
3. वही, पृष्ठ-15
4. वही, पृष्ठ-29
5. चितरंजन दास (2007); लेटर्स फ्रोम अ फॉरेस्ट स्कूल। नई दिल्लीः नेशनल बुक ट्रस्ट।
6. चितरंजन दास (2007); लेटर्स फ्रोम अ फॉरेस्ट स्कूल। नई दिल्लीः नेशनल बुक ट्रस्ट।